RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-01
January-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

दन्त कथाओं में विद्यापति

[1]स्वाति चौधरी; [2]डॉ. ब्रजलता शर्मा

[1]शोधार्थी मानविकी एवं हिंदी विभाग हिमालयन गढ़वाल विश्वविद्यालय
[2]शोधनिदेशक मानविकी एवं हिंदी विभाग हिमालयन गढ़वाल विश्वविद्यालय

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 20January 2019

Keywords
महाकवि विद्यापति कीर्तिलता कीर्तिपताका

ABSTRACT

महाकवि विद्यापति भारतीय साहित्य के अनूठे रचनाकार हैं। उनका जीवन–प्रसंग और रचना–विधान दन्तकथाओं से भरा पड़ा है। दन्तकथाओं के कारण उनका मूल्यांकन करते हुए कई बार लोग गलत निष्पत्ति भी निकालते रहे हैं। उनकी जीवनानुभूति और कौशल की उपेक्षा करते हुए उनके रचनात्मक उत्कर्ष में किसी दैवीय शक्ति का प्रबल योगदान समझते रहे हैं। जनश्रुति है कि स्वयं भगवान शिव, उगना नाम से उनके निजी सेवक के रूप में साथ रहते थे।

अनुसन्धान के क्रम में पाया गया है कि उनकी रचनाएँ संस्कृत, अवहट्ट, मैथिली–तीन भाषाओं में उपलब्ध हैं। प्रसिद्ध ग्रन्थ हिन्दी साहित्य का इतिहास में प्रख्यात समालोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने काल विभाजन करते हुए विषय–बोध के स्तर पर जिन बारह ग्रन्थों को आधार मानकर आदिकाल का नामकरण वीरगाथाकाल किया था, उसमें दो ग्रन्थ विद्यापति के ही थे–**कीर्तिलता और कीर्तिपताका**। पर यह विचित्र रहस्य है कि बावजूद इसके विद्यापति को उन्होंने अपने साहित्येतिहास में एक अवतरण से अधिक जगह नहीं दे सकें।

1. प्रस्तावना

अनेक कारणों से भारत के अधिकांश मनीषियों के जन्म–मृत्यु का काल आज के शोधकर्मियों के लिए विवाद का विषय बना हुआ है। विद्यापति उस प्रकरण के सार्थक उदाहरण हैं। उनके जन्म–मृत्यु की स्पष्ट सूचना का उल्लेख कहीं नहीं मिलने के कारण विद्वान लोग उनकी रचनाओं में अंकित राजाओं के उल्लेख से तिथि–निर्धारण हेतु तर्क करते आए हैं। **दशरथ ओझा,** विद्यापति की आयु इक्कीस वर्ष मानकर उनका काल सन् **1380–1460** बताते हैं (हिन्दी नाटकः उद्भव और विकासध्दशरथ ओझाध्राजपाल एण्ड सन्सध2008ध्पृ. 50)। रामवृक्ष बेनीपुरी उस काल के राजाओं और राजवंशों की तजबीज करते हुए विद्यापति की आयु नब्बे वर्ष मानकर उनका काल सन् **1350–1440** (ल.सं. 241–331) बताते हैं। कीर्तिलता की भूमिका लिखते हुए महामहोपाध्याय उमेश मिश्र उनका समय सन् 1360–1448 (ल.सं. 241–329) बताते हैं। इस गणना में विद्यापति की आयु नवासी वर्ष, और लक्ष्मण संवत् तथा ईस्वी सन् के बीच 1119 वर्ष का अन्तर हो जाता है, जबकि यह अन्तर मात्र 1110 वर्ष का है। इस समय लक्ष्मण संवत 910 चल रहा है, जो 21 जनवरी 2020 (माघ कृष्ण द्वादशी, शक संवत 1941) को पूरा होगा। इस आलोक में **पं. शिवनन्दन ठाकुर** की स्थापना सत्य के सर्वाधिक निकट लगती है। पर्याप्त शोध–सन्दर्भ और तर्कसम्मत व्याख्या देकर उन्होंने विद्यापति की आयु सतानवें वर्ष और उनके समय की गणना सन् **1342–1439** (ल.सं. 232–329) की है।

कुछ दशक पूर्व तक तो उनके जन्मस्थान के बारे में भी गहरा विवाद था। बंगलाभाषियों का दावा था, कि विद्यापति बंगाल के थे, और बंगला के रचनाकार थे। कुछ अनुसन्धानकर्ताओं ने तो बंगाल में उनके जन्म–स्थान के साथ–साथ बंगवासी राजा शिवसिंह और रानी लखिमा की खोज भी कर ली। विवाद गहराता गया। दरअसल मैथिली में रची गई (राधा–कृष्ण) प्रेम विषयक उनकी पदावली उन दिनों अत्यधिक लोकानुरंजक थी। उन मनोहारी पदों की लोकप्रियता जन–जन के कण्ठ में बसी हुई थी। लोकोक्ति, मुहावरे की तरह पदों की पंक्तियाँ लोकजीवन में प्रयुक्त होने लगी थीं। कवि–कोकिल, कविकण्ठहार जैसे सम्मानित सम्बोधनों के साथ वे सच्चे अर्थ में जनकवि की तरह लोकप्रिय और चर्चित थे। मैथिली लिपि में लिखी गई उस पदावली के कई वर्णों के स्वरूप बंगला वर्णमाला से मेल खाते थे। उन्हीं दिनों बंगाल में राधाकृष्ण के परम भक्त चैतन्य महाप्रभु (सन् 1486–1534) का पदार्पण हुआ। लोककण्ठ में बसे विद्यापति के पदों को सुनकर वे मन्त्रमुग्ध हो उठे। ऐसी कथा हैं कि श्रृंगार–रस से परिपूर्ण विद्यापति के गीत गाते हुए चैतन्य महाप्रभु भक्तिभाव से बेसुध हो जाते थे। उनकी शिष्य–परम्परा में भी इस प्रथा का अनुसरण हुआ। कुछ तो उस तरह की रचनाएँ भी करने लगे। सैकड़ो वर्षों तक बंगलाभाषियों द्वारा गाए जाने के कारण विद्यापति के पदों का स्वरूप भी वहाँ बंगला हो गया। अब इतना–सा आधार तो साहित्यिक विवाद के लिए पर्याप्त होता है। विवाद चला, पर ग्रियर्सन, महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री, बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त, सुनीति कुमार चटर्जी आदि विद्वानों की एकस्वर घोषणा के बाद अब वे सारी बहस समाप्त हो गईं। अब कोई दुविधा नहीं कि **विद्यापति मिथिला के बिस्फी गाँव के थे,** जो अब बिहार के मधुबनी जिले में आता है। कर्मकाण्ड, धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र, न्यायशास्त्र, सौन्दर्यशास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित महाकवि विद्यापति की संस्कृत, अवहट्ट, मैथिली––तीनो

RRIJM 2015, All Rights Reserved

भाषाओं की रचनाएँ गाथा, कीर्तिगान, उपदेश, नीति, धर्म, भक्ति, श्रृंगार, संयोग–वियोग, मान–अभिसार––जीवन–यापन के हर क्षेत्र से सम्बन्धित विषय की हैं। शास्त्र और लोक––दोनों ही संसार की मोहक छवियाँ उनकी कालजयी रचनाओं में चित्रित मिलती हैं।

2. विद्यापति और उनकी दन्त कथाएं

महाकवि विद्यापति हिंदी साहित्य की भक्ति परंपरा के प्रमुख कवियों में से एक हैं, जिन्हें मैथिली के सर्वोपरि कवि के रूप में जाना जाता हैं। वे भगवान शिव के बहुत बड़े भक्त हुआ करते थे। उन्होंने भगवान शिव पर अनेकानेक गीतों की रचना की है। मान्यताओं के अनुसार, जगतव्यापी भगवान शिव विद्यापति की भक्ति व रचनाओं से बेहद प्रसन्न होकर स्वयं एक दिन वेश बदलकर उनके पास चले आए थे। उनके साथ रहने के लिए भगवान शिव विद्यापति के घर चाकर तक बनने के लिए तैयार थे। उन्होंने अपना नाम उगना बताया था। दरअसल कवि विद्यापति आर्थिक रूप से सबल नहीं थे, इसलिए उन्होंने उगना अर्थात भगवान शिव को चाकरी पर रखने से पहले मना कर दिया। मगर फिर शिवजी के कहने पर ही सिर्फ दो वक्त के भोजन पर उन्हें रखने के लिए विद्यापति तैयार हो गए थे।

एक दिन विद्यापति घने जंगल से होते हुए राजा के दरबार में जा रहे थे, रास्ते में तेज गर्मी व धूप से विद्यापति का गला सूखने लगा, मगर आस–पास जल या किसी प्रकार जल स्त्रोत नहीं था। इस पर साथ चल रहे विद्यापति ने बालक उगना (शिवजी) से जल लाने के लिए कहा। तब शिव ने थोड़ा दूर जाकर अपनी जटा खोली व एक लौटा गंगाजल ले आए। जल पीते ही विद्यापति को गंगाजल का स्वाद आया, उन्होंने सोचा कि इस वन के बीच यह जल कहां से आया। इसके बाद उन्हें संदेह हुआ कि कहीं उगना स्वयं भगवान शिव ही तो नहीं हैं। उन्होंने शिव के चरण पकड़ लिए तो शिव को अपने वास्तविक स्वरूप में आना पड़ा। इसके बाद शिवजी ने महाकवि विद्यापति के साथ रहने की इच्छा जताई और उन्हें बताया, कि वह उगना बनकर ही साथ रहेंगे। उनके वास्तविक रूप का किसी को पता नहीं चलना चाहिए।

विद्यापति ने भगवान शिव की इस शर्त को अपनी स्वीकृति मान लीं, लेकिन एक दिन उगना द्वारा किसी भूल पर कवि की पत्नी शिवजी को चूल्हे की जलती लकड़ी से पीटने को आतुर हुई। उसी समय विद्यापति वहां आ गए और उनके मुख से निकल गया कि यह तो साक्षात भगवान शिव हैं, और तुम इन्हें पीटने के उद्देश्य से हाथ उठा रही हो। किन्तु विद्यापति के मुख से उगना के शिव होने की प्रत्यक्षता व स्पष्टीकरण के पश्चात् ही शर्त के अनुसार शिव अंतर्ध्यान हो गए। इसके बाद अपनी भूल पर पछताते हुए, कवि विद्यापति वन–वन में शिवजी को खोजने लगे। अपने प्रिय भक्त की ऐसी दशा देखकर भगवान उनके समक्ष प्रकट हुए और उन्हें समझाया कि मैं अब तुम्हारे साथ नहीं रह सकता। परंतु उगना के रूप में जो तुम्हारे साथ रहा उसके प्रतीक चिन्ह के रूप में अब मैं शिवलिंग के रूप में तुम्हारे पास विराजमान रहूंगा। उसके बाद से ही उस स्थान पर **स्वयंभू शिवलिंग** प्रकट हो गया।

दूसरी जन श्रुति के अनुसार जब शिवसिंह ने अपने पिता देवसिंह के शासनकाल में दिल्ली को कर देने से मना कर दिया था, तब दिल्ली सलतनत ने आक्रमण कर शिवसिंह को बन्दी बनाया और दिल्ली ले गए। अधीनता स्वीकार करने के कारण राजा देवसिंह का राज्य तो रहा लेकिन पुत्र–वियोग ने उन्हें तोड़कर रख दिया। विद्यापति भी मित्र–वियोग व राजकुमार शिवसिंह के बन्दी होने से दुखी, चिन्तित व व्याकुल हो उठे। उन्होंने अपने सुहृदय राजकुमार को केद मुक्त कराने के उद्देश्य से दिल्ली प्रस्थान किया। वहाँ पहूँचक उन्होंने सुलतनत को अपना परिचय दिया और उसका साक्षात्कार कर, निवेदन किया कि वह अदृश्य वस्तुओं का दृश्यवत् वर्णन कर सकते हैं। सुलतान ने उनकी परीक्षा लेने का निर्णय कर आदेश दिया कि वह अदृश्य वस्तुओं का वर्णन करें। उस समय दिल्लीश्वर के अंतःपुर स्थित स्नानागार में स्त्रियाँ स्नान कर रही थीं। आदेश पाते ही विद्यापति उनका काव्यमय वर्णन करने लगे, परन्तु इससे भी सुलतान संतुष्ट नहीं हुए, तब उसने विद्यापति को एक संदूक में बंद कर कुएँ में लटकाने का आदेश दिया। तत्काल ही कौतुहलवश आग फूंकती हुई सुंदरी का काव्यगत वर्णन करने लगे। इस पर सुलतान प्रसन्न हो उठे और विद्यापति को ''दशावधान'' की उपाधि के साथ शिवसिंह को भी बंधन मुक्त कर दिया।

प्रथम अदृश्य व्याख्या :–

आज मोहे शुभदिन बेला

द्वितीय अदृश्य व्याख्या :–

कामिनी करए सनाने, हेरतपी हृदय हनम पचवाने।
धिकुर गश्य जल धारा, जनि मुख–शनि वो दोअए अंधारा कचयुग चारू चकेता; निअकुल मिलित आनि कोने देवा।
ते संकावे भुज–पासे बाहन्ह धाएल उडि जाएत अकारों।
सन्दर्भ विद्यापति : संत मित्र मजुमदार, पद संख्या 233

तीसरी कथानुसार एक बार विद्यापति ने अपने गाँव को अतिथिशाला, जिसका निर्माण उन्होंने स्वयं करवाया था की नियमित निरीक्षण हेतु पहुँचे। उनके अतिथिशाला पहूँचते ही सभी उनकी अभ्यर्थना में उठ खड़े हुए और वहाँ की सभी व्यवस्थाओं व भोजन की प्रशंसा करने लगे। तभी उनकी नजर कोने में चुपचाप बैठे एक दुर्बल अल्प वयस्क युवक पर पड़ी। पूछने पर पता चला कि बीते शाम नींद जल्दी आ जाने के कारण भोजन के लिए किसी ने उसे जगाया ही नहीं। इस

कारण किशोर भोजन से वंचित ही रहा। इस घटना की जानकारी होते ही अनायास विद्यापति के मुख से निकल पड़ा ''प्राधुणो धुणवत कोणे सुक्ष्मत्यान्यो–लक्षित।'' (इसका आशय है धुन की तरह कोने में बैठे उस अतिथि को सूक्ष्मता से किसी ने नहीं देखा)। यह सुनते ही अतिथि ने कहा प्रायशः स्थूल बुद्धि के स्वामियों की दृष्टि सूक्ष्म वस्तुओं तक नहीं पहूँच पाती। अतिथि से जवाब मिलते ही कवि सहृदय ने अपने गुरु मित्र/भाई पक्षधर मिश्र को पहचान लिया और उन्हें अपने घर ले जाकर उनका उचित सत्कार किया।

चौथी लोक कथानुसार– विद्यापति का जब अंत समय आया, तब उन्होंने अपनी कुलदेवी विश्वेश्वरी को प्रणाम कर ''मरण जाहान्वी तीरे'' की कामना लिए एक पाली में गंगातट के लिए प्रस्थान किया। गंगा तट से अभी दो कोस बाकी ही थे, कि उन्होंने अपनी पालकी रखवा दी। कवि कोकिल को यह विचार आया, कि वहइतनी दूर से गंगा माता के लिए आये, क्या वह अपने पुत्र के लिए दो–कोस भी नहीं आ सकेंगी? ऐसे मान्यता है कि उसी रात गंगा तीन धाराओं में विभक्त होकर प्रवाहित होने लगी और विद्यापति उनकी गोद में समाहित हो अपना जीवन विसर्जित किया। जहाँ वह जलमग्न हुए अकस्मात् एक शिवसिंह निकल आया। आगे चलकर वहाँ एक शिव–मंदिर बनवाया गया, जो आज भी मौजूद है।

पाँचवीं किंवदन्ती कुछ इस प्रकार है कि वर्तमान NE–रेलवे (प्राचीन BLW रेलवे) की लाईन उस स्थान से होकर बनाई जा रही थी, जिस स्थान पर कवि कंतहार विद्यापति ने अंतिम सांस ली थी।

लाईन बनाने की तैयारी जोरों पर थी, रेलवे लाईन के निर्माण कार्य के दौरान ही, आस–पास के पेड़ों से खून निकलने लगा और उस लाईन को निर्माणाधीन करने वाले इंजीनियर गंभीर रूप से बीमार हो गए। अतः बाध्य होकर स्थानीय निवासियों के अनुरोध पर सरकार को लाईन टेढ़ी करनी पड़ी और वहाँ से हटकर दिशा बदलकर रेलवे लाईन के निर्माण का कार्य संपन्न हुआ।

3. विद्यापति का शिव प्रेम और उगना की लोककथा

महाकवि विद्यापति भगवान शिव के अनन्य भक्त थे। उन्होंने महेशवानी और नचारी के नाम से शिवभक्ति से सम्बन्धित अनेक गीतों की रचना की। महेशबानी में जहाँ शिव के परिवार के सदस्यों का वर्णन, देवाधिदेव महादेव भगवान शंकर का फक्कर स्वरुप, दुनिया के लिए दानी, अपने लिए भिखारी का वेष, भूत–प्रेत, नाग, बसहा बैल, मूसे और सयुर सभी का एक जगह समन्वय, चिता का भष्म शरीर में लपेटना, भांग–धथुर पीना आदि शामिल है, तो दूसरी ओर नचारी में एक भक्त भगवान शिव के समक्ष अपनी विवसता या दुःख नाचकर या लाचार होकर सुनाता है।

अगे माई जोगिया मोर जगत सुखदायक।
दुख ककरो नहिं देल।।
दुख ककरो नहिं देल महादेव, दुख ककरो नहिं देल।
अहि जोगिया के भाँग भुलैलक।
धथुर खुआइ धन लेल।।
आगे माई कार्तिक गणपति दुइ छनि बालक।
जगभर के नहिं जान।।
तिनकहँ अमरन किछुओं न थिकइन।
रत्ती एक सोन नहिं कान।।
अगे माई, सोन रुप अनका सुत अमरन।।
अधन रुद्रक माल।
अप्पन पुत लेल किछुओ ने जुड़ैलन।।
अनका लेल जंजाल।
अगे माई छन में हेरथि कोटि धन बकसथि।।
ताहि दबा नहिं थोर।
भनहि बिद्यापति सुनु ए मनाईनि
थिकाह दिगम्बर मोर।।

इस गीत में कवि एक महिला के माध्यम से कुछ इस प्रकार की बातें भगवान शंकर के सम्बन्ध में कहबाना चाहते हैं:

''मेरी सहेली, चाची एवं माँ, मैं क्या बताऊँ। मेरा अनमोल जोगी अर्थात् भगवान शंकर समस्त संसार के प्राणियों को सुख देने वाला है। यह किसी को दुख देना जानता ही नहीं है। भगवान शिव ने किसी को भी दुख नहीं दिया है। इस मस्त जोगी को भांग एवं धतूरा पिलाकर लोगों ने बदले में अपार धन का वरदान लिया है। जग में कौन भला नहीं जानता कि कार्तिक एवं गणेश इनके दे गुणी पुत्र हैं। इन्हें कोई आभूषण नहीं है और कानों में रत्ती–भर भी सोना नहीं है। दूसरों को सोना–चाँदी का आभरण ये देते हैं और अपने लिए केवल रुद्राश की माला भर है। अपने पुत्र के लिए नाना तरह के झंझट अपने सिर ले लेते हैं। फिर भी क्या कहूँ–ए सखी, यदि एक क्षण के लिए कृपालु हो जायँ तो करोड़ों का धन दे दे, किसी को देने में ये कभी नहीं करते। महाकवि विद्यापति कहते हैं कि ऐ मान्ये! सुनो, ये दिगम्बर शिव एकदम मेरे हैं।''

नचारी में एक भक्त भगवान शंकर से अपनी लाचारी का बयान करता है। मिथिला विश्वविद्यालय के संगीत एवं नाटक विभाग के भूतपूर्व विभागध्यक्ष **प्रो. चण्डेश्वर झा** बताते हैं, **''नचारी गीत संभवतः लाचारी का अपभ्रंश है। परन्तु लोग अपनी दुख का बयान नाचकर एवं भाव–विभोर होकर करतै हैं, अतः नचारी शब्द को अपभ्रंश भी आंख मूंदकर मान लेना उचित नहीं है।''** जो भी नचारी में भक्त सचमुच में लाचार लगता है।

कखन हरब दुख मोर,
हे भोलानाथ कखन हरब दुख मोर,
दुखहिं जनम भेल, दुखहिं गमाओल,
सुख कखनहुँ नहिं भेल
हे भोलानाथ कखन हरब दुख मोर?

इसका अर्थ बिल्कुल स्पष्ट है। भक्त अपनीपरेशानी भोलानाथ अर्थात् शिव से कहता है, ''हे भोलानाथ, आप मेरे

दुख का निवारण कब करेंगे? मेरा जन्म दुख में हुआ और तभी से आजतक केवल दुख ही झेल रहा हूँ। सुख मेरे लिए असंभव बन गया है। और तो और मैं ते स्वप्न में भी सुख नही देखता। है भोलानाथ! आप मेरे दुख का निवारण कब करेंगे?''

मिथिला के लोकमानस में यह बात समस्त विख्यात है कि विद्यापति जैसा शिवभक्त न इतिहास में हुआ न ही भविष्य में हो सकता है। लोकमान्यता के अनुसार महाकवि की रचनाधर्मिता एवं अपने प्रति भक्ति का असीम स्नेह को देखकर भगवान शंकर द्रवित हो गए। उन्हें ऐसा लगा कि अपने इस आश्चर्यजनक भक्त एवं कवि विद्यापति के बिना वे रह ही नहीं सकते।फिर क्या था। एक दिन भगवान आशुतोष (शिव) ने अपना बालक रुप बदल लिया और महाकवि के समक्ष उपस्थित हो गए। उस बालक को देखकर महाकवि ने पूछाः ''तुम्हारा नाम क्या है? तुम मेरे पास क्यों आए हो?'' इस पर उसने जवाब दिया, ''मेरा नाम उगना है। काम की तलाश में हूँ।''

इस पर महाकवि ने जवाब दिया,''मैं तो एक साधारण कवि हूँ। मेरे पास किसी भी तरह का रोजगार तुम्हारे लायक नहीं है।'' अब उगना बोला, ''हे कवि, आप मुझे अपने पास चाकर बना कर क्यों नहीं रख लेते?''

महाकवि बालक उगना की मासुमियत से प्रभावित होकर उसे अपनी चाकरी पर रख लिया

एक बार की बात है। एक दिन महाकवि अपने गाँव बिस्फी से राजदरबार जा रहे थे । सेवक उगना भी साथ था। जेठ महीना था। गरमी अपने चरमोत्कर्ष पर थी। दोनों भरी दुपहरिया में पैदल चले जा रहे थे, आगे–आगे महाकवि विद्यापति और पीछे–पीछे उगना। चलते–चलते वे एक ऐसे स्थान में पहुँचे जो बिल्कुल विरान लग रहा था। चारों तरफ न वृक्ष, न पानी का स्रोत, केवल खेत–ही–खेत। वह भी फसलविहिन बड़ेबड़े मिट्टी के टुकड़ों से उबर–खाबर खेत। एकाएक महाकवि को प्यास लगी। परन्तु पानी नहीं था और पानी का कोई स्रोत–कुँआ, तालाब, नदी आदि तो है ही नहीं। एक आम के पेड़ के नीचे रुककर महाकवि ने उगना को सम्बोधित करते हुए कहाः

''उगना, मैं पानी पीना चाहता हूँ। यह लोटा लो और कहीं से पानी की व्यवस्था करो।''

उगना लाचार भाव से इधर–उधर देखते हुए बोला– ''ठाकुरजी, परन्तु जल का स्रोत कहीं भी न नहीं आता। आप ही बताइये मैं क्या करूँ। विद्यापति का गला प्यास से सुखने लगा। बोल पड़े, ''उगना, कहीं से भी पानी की व्यवस्था करो, वरना मैं प्यास से मर जाऊँगा।''

इतना कहकर कवि बेहोश होकर वहीं सो गये। उगना तो मामूली चाकर था नहीं। वह तो साक्षात् देवाधिदेव महादेव था। कोई उपाय न पाकर कुछ दूर गया और अपने जटा से एक लोटा गंगा जल लेकर महाकवि के पास आ गया।

''ठाकुरजी, ठाकुरजी, उठिये आपके लिए किसी तरह मैंने एक लोटा जल का प्रबन्ध किया है। उठिये जल पीकर अपनी प्यास बुझाईये।''

वे फुर्ती के साथ उठे और लोटा के जल को एक ही साँस में पी गए। जल पीते ही उन्हें अनुभव हुआ कि यह जल सामान्य न होकर विशिष्ट था। महाकवि ने उगना से पूछा–

''उगना, सच–सच बताओ तुम यह जल कहाँ से लाए। उगना, तुम मामूली चाकर नहीं हो। यह जल साधारण जल नहीं बल्कि गंगाजल है।''

उगना बात को टालते हुए बोला–

''नहीं ठाकुरजी, मैं तो थोड़ी दूर जाकर एक कुँए से आपके लिये यह जल बड़ी सुश्किल से लाया हूँ। आप बेवजह इसे गंगाजल कह रहे हैं। मैं भला इस विरान जगह में गंगाजल कहाँ से ला सकता हूँ। आप शंका न करें। जल्दी उठिये अब हम लोग आगे का सफर प्रारंभ करते हैं।''

विद्यापति फिर बोल उठे–

''उगना कहीं तुम शिव तो नहीं हो।'' इस पर उगना मुस्करा दिया। विद्यापति को अब पूर्ण विश्वास हो गया कि उगना कोई और नहीं बल्कि भगवान महादेव है, और उसने अपने जटा से गंगाजल निकालकर उन्हें पीने के लिए दिया है। फिर क्या था वे उगना के पैर पर गिर कर त्राहिमाम् प्रभो–त्राहिमाम् कहने लगे।

अब उगना शिव के असली रुप में उपस्थित होकर कवि को धन्य कर दिया। महाकवि ने विस्फोटित नेत्रों से महादेव का दर्शन किया। फिर भगवान महादेव महाकवि को ईंगित करते हुए कहना प्रारंभ कियाः

''देखो विद्यापति, मैं तुम्हारी भक्ति और कवित्त शैली से इतना प्रभावित हूँ कि हमेशा तुम्हारे साथ रहना चाहता हूँ। इसीलिए मैं उगना नामक जटिल चाकर का वेश बदलकर तुम्हारे पास गया। मैं अब भी तुम्हारे पास रहना चाहता हूँ, परन्तु एक शर्त है। जिस दिन तुमने किसी से यह कह दिया कि मैं उगना न होकर महादेव हूँ, मैं उसी पल अन्तर्ध्यान हो जाऊँगा। इसे तुम अच्छी तरह गांठ बांध लो।''

इस पर महाकवि ने गर्दन हिलाकर अपनी स्वीकृति दे दी। भगवान महादेव पुनः उगना के वेश में आ गए। हालांकि इस घटना के बाद महाकवि प्रयास करते कि उगना से जितना कम कार्य करवायाजा सके उतना अच्छा है। लेकिन उनकी पत्नी तो इस सच से बिल्कुल अन्जान थी।

एक दिन सुशीला ने उगना को कोई कार्य करने के लिए कहा। उगना कार्य को अच्छी तरह समझ नहीं पाया। करना कुछ और कर कुछ और दिया। इस पर सुशीला सुस्से से लाल हो गई। अपना क्रोध नहीं बर्दाश्त कर पाई। आवेग में आकर जमीन में पड़े झाड़ू उठाकर तरातर उगना पर बेतहाशा प्रहार करने लगी। उगना झाड़ू खाता रहा। इसी बीच महाकवि वहाँ पहुँच गए। उन्होंने सुशीला को मना किया। परन्तु सुशीला

ने मारना बन्द नहीं किया। अब कवि के शव का बांध टूट गया। एकाएक भावातिरेक में चिल्लाते हुए बोले–

''अरी, ना समझ नारी! तुम्हे पता है तुम क्या कर रही हो? उगना सामान्य चाकर नहीं बल्कि भगवान शंकर है। तुम भगवान शंकर को झाड़ू मार रही हो।''

कवि का इतना कहना था कि उगना अन्तर्ध्यान हो गया। अब विद्यापति को अपनी गलती का अहसास हुआ। लेकिन तब तक उगना विलीन हो चुका था। कवि घोर पश्चाताप में खो गये। खाना–पीना सभी छोड़कर उगना, उगना, उगना रट लगाने लगे। बावरे की तरह जगह–जगह उगना को खोजने लगे।

महाकवि विद्यापति अधीर हो उठे। उनकी अधिरता ही पद का रुप ग्रहण करने लगी– अरे, मेरा उगना। तुम कहाँ चले गए? मेरे शिव, तुम कहाँ खो गए! तुम्हें क्या हो गया? आह! अगर तुम्हारी झोली में भागं नहीं रहता था तुम कैसे रुठ जाते थे! और जैसे ही मैं खोज–खाज कर ला देता था, तो तुम प्रसनान हो जाते थे। आज तुम एकाएक कहाँ चले गए? जो के ई भी मुझे मेरा उगना के सम्बन्ध में जानकारी देगा, मैं वास्तव में उसे उपहार स्वरुप कंगना दूँगा। अरे! भगवान महेश तो मिल गए! भाई, उसी नन्दन कानन में। अरे देखो, गौरी भी प्रसन्न हो उठी। अब मेरा भी क्लेश खत्म हो गया। मुझे तो केवल उगना से कार्य है। तीनों–लोक का यह राज–पाट मेरे लिए हितकारी नहीं है।

4. विद्यापति और बिस्फी गांव

बिहार के मधुबनी जिले में गांव है **बिस्फी**। इस गांव को लोग महाकवि विद्यापति की जन्मस्थली के रूप में जानते हैं। यह गाव विद्यापति को उनके प्रतिभा के कारण उनके आश्रय दाता राजा ने पुरस्कार के रूप में राजा ने दिया था। महाकवि ने इस गांव में ही अपनी महत्वपूर्ण कृतियों की रचना की। जिसके कारण वे साहित्य और इतिहास में पूरे सम्मान के साथ स्थापित हैं। विद्यापति ने संस्कृत, अवहट्ट और मैथिली भाषा में इस गांव का जिक्र किया है। उन्हें इसी गांव के साथ उनके आश्रयदाता राजा शिवसिंह ने 'अभिनव जयदेव' की उपाधि से विभूषित किया था।

बिस्फी गांव में सरकार की ओर से विद्यापति स्मारक भवन बनाया गया है लेकिन नियमित कोई कार्यक्रम नहीं होने की वजह से स्मारक भवन की देखभाल नहीं हो रही है। स्मारक भवन एक मामूली मकान की तरह बनाकर कर्तव्य की इतिश्री मात्र कर दी गई। ऐसे स्थलों का निर्माण जिस सांस्कृतिक समझ–बूझ से किया जाना चाहिए था, नहीं हुआ। बिस्फी में विद्यापति का जन्म हुआ है, वहां उनकी एक प्रतिमा है और पूरा स्मारक भवन दीवारों से घिरा है। भवन में मात्र एक हॉल है, जिनमें विद्यापति से संबंधित कुछ भ्रांतियां हैं और खाली पड़े दर्जनों आलमारियां हैं, जिन्हें विद्यापति और उनसे संबंधित पुस्तकें रखने के लिए लायी गयी थी। इन आलमारियों में किसी एक में भी कोई किताब नहीं है। लोहे की आलमारियां जर्जर हो रही है। स्मारक भवन की दीवारों में भी दरारें आ गई हैं।

5. निष्कर्ष

महाकवि विद्यापति भारतीय साहित्य के उन गिने–चुने जिम्मेदार रचनाकारों में से हैं, जिनकी रचनात्मषकता राज्यापश्रय में रहने के बावजूद चारण–काव्यो की ओर कभी उन्मेुख नहीं हुई। उनका राष्ट्र–बोध, संस्कृाति–बोध, इतिहास–बोध, और समाज–बोध सदा उनको संचालित करता रहा। उनके सामाजिक सरोकार, रचनात्मपक दायित्व , नैतिकता एवं निष्ठा– के प्रमाण, पदावली के अलावा संस्कृति और अवहट्ट में भी रचित उनकी कृतियों में स्पेष्टव दिखते हैं। पर उन्हें जन–जन तक पहुँचाने का श्रेय उनकी कोमलकान्ति पदावली को जाता है। राजमहल से झोपड़ी तक, देवमन्दिर से रंगशाला तक, प्रणय–कक्ष से चौपाल तक उनके पद समान रूप से आज भी समादृत हैं। वयःसन्धि, पूर्णयौवना, विरहाकुल, कामातुरा, कामदग्धा...सभी कोटि की नायिकाओं के नखशिख वर्णन मान, विरह, मिलन, भावोल्लास वर्णन शिव, कृष्ण, दुर्गा, गंगा के स्तुति–पद में कवि ने सामाजिक जीवन के व्यवहारिक स्वरूप को उजागर किया है। इतिहास गवाह है कि उनके पद न केवल ओइनवार वंश के राजघराने या चैतन्य महाप्रभु एवं उनके भक्त, शिष्यों या ग्रियर्सन, रवीन्द्रनाथ टैगोर, महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री , महामहोपाध्याउय उमेश मिश्र, नगेन्द्र नाथ गुप्त जैसे श्रेष्ठ विद्वानों को सम्मोहित करते थे, बल्कि आज भी वे पद आम–जनजीवन के सर्वविध सहचर बने हुए हैं नागरिक जीवन के संस्कामरों, लोकाचारों में लोकजीवन के अनुरंग बने हुए हैं। जन्म , मुण्डन, उपनयन, विवाह, द्विरागमन, पूजा–अर्चना...हर अवसर पर उनके पद लोक–कण्ठ से स्वतः फूट पड़ते हैं। उन पदों की असंख्य, पंक्तियाँ मैथिल–समाज में आज कहावत की तरह प्रचलित हैं। उन पदों का विधिवत संकलन किया जाए, तो लगभग हजार के आँकड़े होंगे। पदों में चित्रित जनजीवन का वैविध्य् देखकर अचरज होना स्वा्भाविक है कि किसी एक व्यमक्तिह के पास स्थाउन–काल–पात्र, लिंग–जाति–वर्ग–सम्प्र दाय, शोक–उल्लास, जय–पराजय, नीति–धर्म–दर्शन–इतिहास–शासन, साहित्य–कला–संगीत–संस्कृति, युद्ध–प्रेम–पूजा... जैसे तमाम क्षेत्रों का इतना सूक्ष्म अवबोध कैसे हो सकता है। अचरज जो भी हो, पर सत्यि यही है! ऐसे पूर्वज साहित्य सेवी के अवदान से गौरवान्वित भारतीय साहित्य धन्य है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

सहायक ग्रन्थों की सूची

1. महेन्द्रनाथ दुबे , गीत विद्यापति , पद – 713
2. वही , पद – 434
3. गीत विद्यापति , पद – 446
4. रामवृक्ष बेनीपुरी , विद्यापति की पदावली , पद – 2
5. गीत विद्यापति , पद – 446
6. वही , पद – 418
7. गीत विद्यापति , पद – 336
8. वही , पद – 416
9. गीत विद्यापति , पद – 460
10. वही , पद – 461
11. डॉ . शिवप्रसाद सिंह , विघापति
12. विद्यापति की पदावली , पद – 27
13. वही , पद – 28
14. विद्यापति–दर्शन डॉ. बजरंग वर्मा, बिहार हिन्दी ग्रंस्थ अकाडमी, पटना

RRIJM 2015, All Rights Reserved